International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 13 Issue 12, December- 2023
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 8.018
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

कृषि तकनीकी, कृषि विकास स्तर एवं पर्यावरणीय सम्बंधव प्रभाव का अध्ययन

डॉ. भोमाराम

सहायक आचार्य (भूगोल विभाग)

राजकीय महाविद्यालय, टहला (अलवर), राजस्थान

समबद्ध : राज ऋषि भर्तृहरि मत्स्य विश्वविद्यालय, अलवर (राजस्थान)

लेख सार :

सामान्य रूप मे यह कहा जा सकता है कि कृषि तकनीकी विकास एवं पर्यावरण सम्बंध विभिन्न वस्तुओं का एक ऐसा एकीकृत समूह होता है जिसके विभिन्न संघटक, आपस में आबद्य होते है तथा एक दूसरे के साथ अनुक्रिया करते है। उदाहरण के लिए मानव का शरीर एक तन्त्र है, मोटर कार का इंजन, गैस स्टोव आदि सम्बंध है यहाँ पर भी एक सम्बंध है। सामान्य रूप मे यह कहा जा सकता है कि कृषि तकनीकी विकास एवं पर्यावरण सम्बंध विभिन्न वस्तुओं का एक ऐसा एकीकृत समूह होता है जिसके विभिन्न संघटक, आपस में आबद्य होते है तथा एक दूसरे के साथ अनुक्रिया करते है। उदाहरण के लिए मानव का शरीर एक तन्त्र है, मोटर कार का इंजन, गैस स्टोव आदि सम्बंध है यहाँ पर भी एक सम्बंध है।

लेख शब्द : कृषि, तकनीकीकरण, विकास, पर्यावरण, संबंध, प्रभाव,अवन्यन, प्रदुषण, आधुनिकीकरण, उत्पादकता।

लेख :

कृषि तकनीकि विकास :

कृषि तकनीकी विकास में अन्तनिर्मित नियन्त्रण की व्यवस्था होती है। अर्थात् यदि कृषि प्राकृतिक विकास के किसी एक संघटक मे प्राकृतिक एवं मानवीय कारणों से कोई परिवर्तन होता है तो तन्त्र के दूसरे संघटक में परिवर्तन द्वारा उसकी भरपाई हो जाती है। परन्तु यह परिवर्तन यदि प्रौद्योगिकी मानव के आर्थिक क्रिया कलापों द्वारा इतना अधिक हो जाता है कि एक पर्यावरणीय तन्त्र के अन्तनिर्मित नियन्त्रण की व्यवस्था की सहन शक्ति से अधिक हो जाता है तो उक्त परिवर्तन की भपाई (स्थानापूर्ति) नहीं हो पाती है और यह तन्त्र अव्यवस्थित तथा असंतुलित हो जाता है एवं पर्यावरणीय अवन्यन तथा प्रदूषण होता है।

कृषि तकनीकि विकास व पर्यावरणीय सम्बंध में सन्तुलन बनाये हुए है। सिंचाई के साधनों के कारण अव भूमि उनउर्वक होने से बचाया जा सकता है। उन उपजाऊ भूमि को कृषि योग्य बनाया जा

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 13 Issue 12, December- 2023
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 8.018
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

सकता है। तकनीकीकरण द्वारा तिव्र गति से खेतों की मेंङबन्दी, उत्तम किस्म के पेड़–पौधे लगाकर भूमि कटाव के अपर्याप्त अपरदन को रोका जा सकता है। कृषि व पर्यावरण में सदियों से अनुकूल सम्बंध बने हुए कभी कृषि तनीकीकरण पर्यावरणीय दशाओं को प्रभावित करता है तो कभी पर्यावरणीय दशाऐं कृषि विकास को प्रभवित करते है।

कृषि परम्परागत राष्ट्रों में विशेष कर भारत में कृषि एक अजीविका है, एक व्यवसाय है, एक क्रिया–उद्यम है, एक व्यवसाय है कृषि एक परम्परा है, जीवन पद्धति है, एक समाज, सभ्यता एवं संस्कृति है। इस प्रकार भारत में कृषि, कृषि विकास व भूमि उपयोग एक व्यवसाय ही नहीं वरन् एक जीवन पद्धति है। यह एक सांस्कृतिक विरासत है, जो भारत को सदियों से जीवंत रखे हुए है। इस सन्दर्भ में यह मानव जाति के सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक विकास के इतिहास का वह तथ्य है जो मानव सभ्यताओं के विकास क्रम के साथ–साथ धरोहर के रूप में पीढ़ी दर पीढ़ी हमें प्राप्त हुई है।

आधुनिकीकरण ने प्राकृतिक संसासधनों का अधाधुंध उपयोग जैव तकनीकी एवं वैज्ञानिक अन्वेषण, आविष्कारों ने कृषि विकास के प्रारूप उत्पादन क्षमता, वितरण व्यवसाय आदि को एक नवीन रूप दिये है, वहीं इनमें जैविकीय तत्वों को बदल कर फसलों की परिस्थितिकी को ही बदल ड़ाला है। एक ओर बढ़ती जनसंख्या के कारण खाद्यानों की बढ़ती मांग को तो कृषि विकास के स्तर को बढ़ाकर कर लिए लेकिन दूसरी और पर्यावरणीय नियोजन को ध्यान में रखना हम सभी के लिए चिंता का विषय है।

कृषि भूगोल में कृषि विकास एवं नियोजन की संकल्पना विषय वस्तु के व्यवहारिक पक्ष को प्रस्तुत करती है। प्रायः कृषि विकास से तात्पर्य कृषि उत्पादकता वृद्धि से लिया जाता रहा है, कृषि उत्पादकता में यह वृद्धि वैज्ञानिक एवं तकनीकी विधियों खाद, बाजों, सिंचाई के आधुनिक साधनों व आधुनिक यन्त्रों के समावेश के फलस्वरूप सम्भव हुआ है। यहाँ पर कृषि वृद्धि और कृषि विकास में विभेद का ज्ञान आवश्यक है। यान्त्रिक क्रान्ति व हरित क्रान्ति के पूर्व कृषि को उत्पादकता में वृद्धि का स्थानापन्न माना जाता रहा है। परन्तु आज उत्पादकता में होने वाली वृद्धि के अपेक्षाकृत कृषि विकास को अधिक विस्तृत अर्थों में प्रयोग करते है। विकास वृद्धि का पर्याय नहीं अपितु इसमें उत्पादकता वृद्धि के साथ ही उत्पादों का समान सामयिक वितरण तथा पर्यावरणीय सन्तुलन बनाये रखने पर भी विचार किया जाता है। इस प्रकार कृषि विकास का अभिप्राय उस उत्पादकता की वृद्धि से है जिसका लाभ समाज के सभी वर्गों को समान रूप से प्राप्त हो और पर्यावरण का स्वरूप भी विकृत न हो। कृषि भू–दृश्य में विकास तभी सम्भव हो सकता है जब कृषि के स्वरूप को निर्धारण करने वाले सभी कारकों को योजनाबद्ध ढ़ंग से

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 13 Issue 12, December- 2023
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 8.018
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

प्रयोग किया जाये । अब तक केवल उत्पादकता की ही तरह कृषि विकास में सामजिक कल्याण और पर्यावरणीय नियोजन के सन्तुलन सम्बधी तथ्यों को भी प्राथमिकता प्रदान की जा रही है, ताकि किसी भी प्रकार का असंतुलन उत्पन्न न हो ।

जब संसार के विभिन्न क्षेत्रों में कृषि का प्रादुर्भाव हो रहा तब भारत के उत्तरी पश्चिमी क्षेत्र में सिन्धु घाटी में मिश्र घाटी की सभ्यता के समकालीन ही कृषि का विकास हो रहा था। इसलिए भारत उपमहाद्वीप में भी कृषि का विकास अतिप्राचीन काल में हुआ लेकिन यह विकास जिसकी झलक आज भी भारतीय गाँवों में देखने को मिलती हैं। किन्तु वर्तमान में कृषि क्षेत्रों में खादों का प्रयोग और सदुपयोग दोनों हुए है। यहाँ वर्तमान में कृषि विकास की झलक हरित क्रान्ति के साथ दिखलाई देती हैं।

कृषि विकास एवं पर्यावरण की दृष्टि से हमारा देश सम्पन्न है, परन्तु इस संसाधन का सही रूप में उपयोग कैसे किया जाये इस पक्ष के अध्ययन पर अधिक ध्यान नहीं दिया है। अनियन्त्रित कृषि विकास के कारण पर्यावरण प्रदुषण, पारिस्थितिकी असन्तुलन, विज्ञान और प्रौद्योगिकी की असामान्य वृद्धि एवं विकास की गतियाँ, खाद्य संकट, भूखमरी व बैरोजगारी निर्धनता, अशिक्षा, सामाजिक, प्राकृतिक आपदा, वन विकास, आदि समस्याऐं विश्व समुदाय का ध्यान अपनी ओर आकृर्षित कर रही है। कृषि विकास एवं पर्यावरणीय नियोजन आपस में कारण तथा प्रभाव के सम्बन्धों को स्पष्ट करते है।

कृषि विकास स्तर का पर्यावरणीय दशाओं पर प्रभाव

कृषि काल में भरण–पोषण की बढ़ती सुविधा के कारण जहाँ एक और जनसंख्या की उत्तरोत्तर वृद्धि होती गई, वहीं दूसरी और जनसंख्या का विस्तार नये क्षेत्रों में एवं मानवीय आवश्यकताओं को बढ़ाना है। इस प्रक्रिया से जन भार वितरित होकर कृषि विकास को नया आयाम दिया है। कृषि विकास के लिए चारागाह का प्रबन्धन, आबादी के लिए भूमि एवं साजों–सामान, कृषि उपज व उपकरणों को लाने ले जाने के लिए रास्तों का निर्माण और अन्य सांस्कृतिक कार्यों के लिए मानव में संघर्ष प्रारम्भ हुआ। इस युग तक विशल पृथ्वी के परिप्रेक्ष्य में कृषि विकास व आबादी इतनी कम थी कि इस मानवीय हस्तक्षेप को प्रकृति आसानी से क्षतिपूर्ति करने में समर्थ थी । फलतः पर्यावरणीय दशाएं अनुकूल बनी रही।

कृषि विकास स्तर, सामाजिक एवं आर्थिक विकास के साथ मनुष्य की पर्यावरणीय दशाओं पर प्रहार करने की क्षमता में भी विकास हुआ। प्रकृति लाभ नहीं देती है, प्रकृति से लाभ लिया जाता हैं– जैसी भावना ने पर्यावरणीय दशाओं का भरपूर उपयोग करने के लिए उत्साहित किया। प्राकृतिक संसाधनों के भरपूर उपयोग के लिए तकनीकी सुधार होता गया, जिससे उत्तरोत्तर कृषि उत्पादन में वृद्धि होती गई ।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 13 Issue 12, December- 2023
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 8.018
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

अधिक उत्पादन से जनसंख्या का भरण–पोषण आसान होता गया, फलतः जनसंख्या बढ़ती गई। 1650 ई. तक विवश्की जनसंख्या केवल 54.5 करोड़ थी, जो बढ़कर 1850 में 126 करोड़ हो गई। सन् 2011 में लगभग सात अरब हो गई थी। स्पष्ट है कि औधोगिक क्रान्ति के पूर्व जनसंख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि होती रही, क्योंकि इस समय तक कृषि प्रधान देश सबसे अधिक जनसंख्या वाले हो गये थे एशिया के कृषि प्रधान देशों में भारत, चीन, पाकिस्तान व इण्ड़ोनशीया सबसे अधिक जनसंख्या के पूंज बन चुके थे, क्योंकि यहाँ की उपजाऊ भूमि, उपयुक्त जलवायु और सिंचाई के साधन उपयोग के आधार थे। उस समय तक कृषि उत्पादन और खपत में सन्तुलन था, क्योंकि कृषि उत्पादनों का व्यापारिक महत्व केवल स्थानिय था। कृषि के लिए सीमित स्तर पर पर्यावरणीय दशाओं के साथ हस्तक्षेप किया जाता था। फिर भी ऐसी परिस्थितियाँ बनने लगी थी, जिससे स्थानिय पर्यावरणीय दशाएं असंतुलित होने लेगी है। परिवर्तनशील अथवा कृषि विकास स्तर का बड़े पैमान पर वन विनाश,जो उस युग में सुरू आज वृहत पैमान पर पहुँच रहा है। कृषि विकास के कारण बड़ी बस्तियाँ, नगर एवं ग्राम, यातायात के मार्ग, विपणन केन्द्र, सामाजिक संगठन आदि अस्तिव में आये। इसका गहरा प्रभाव पर्यावरणीय दशाओं के साथ मानव निर्मित सांस्कृतिक पर्यावरण पर भी हुआ।

यह कहना सही नहीं है कि कृषि विकास स्तर ने पर्यावरणीय दशाओं को नष्ट किया, क्योंकि कृषि विकास आधुनिक सन्दर्भ में केवल 50 वर्ष पुराना है। भारत व राज्य के साथ–साथ कृषि विकास का पर्यावरण दशकों पर प्रभाव हरित क्रान्ति के युग से प्रारम्भ हुआ है। इसके लिए जनसंख्या विस्फोट प्रमुख रूप से जिम्मेदार है। बड़ती जनसंख्या की बड़ती मांग के कारण कृषि विकास स्तर को बढ़ाने के लिए तकनीकी, रासायनिक खाद उन्नत बीज एवं सिंचाई साधनों के विकास ने पर्यावरणीय दशाओं को प्रभावित किया है। बढ़ती जनसंख्या के कारण मानव बढ़ती गतिविधियों की पूर्ति के लिए मानव ने सबसे पहले कृषि विकास के स्तर को बढ़ाया था। इसके लिए मानव ने सबसे अधिक वनों की कटाई प्रारम्भ की फलस्वरूप वायुमण्डलीय गैसीय सन्तुलन विगड़ा एवं ग्रीन हाऊस प्रभाव तथा ग्लोबल वार्मिग जैसे दुष्परिणाम सामने नजर आने लगे है। ऐसा समझा जाता है कि बड़े पैमानें पर वनों के विनाश से ही इराक में मैसोपोटामिया की सभ्यता, पीरू की इंका सभ्यता तथा सिंधुघाटी की प्राचीन सभ्यताओं का पतन हुआ था। वन विनाश, मृदा अपरदन, बाढ़, अकाल, वर्षा की कमी इत्यादि दुष्परिणाम नजर आने लगे है। पर्यावरणीय दशाओं के अन्य प्रमुख तत्व जिनमें हवा, मिट्टी, एवं पानी सभी गंभीर प्रदूषण की चपेट में क्योंकि जनसंख्या दबाव के कारण प्रकृति निरन्तर अवक्रमित होती चली जा रही हैं। अगर यही सब इसी गति से निरन्तर चलता रहा

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 13 Issue 12, December- 2023
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 8.018
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

तो ''ग्रीन हाऊस प्रभाव'' कारण बढ़ती हुई गर्मी ध्रुवों की बर्फ को पिघलाकर प्रलय को आमंत्रण देगी। वैज्ञानिक 25 वर्ष मे पृथ्वी का तापमान औसतन 1 से 2 डिग्री बढ़ने का अनुमान लगाते है। तापमान बढ़ने से सम्पूर्ण पृथ्वी की पर्यावरणीय दशाओं का सन्तुलन विगड़ता चला जा रहा है। भारत में मौसमी विभाग के अनुसार उर्वर भूमि वाले उत्तरी क्षेत्र में गेंहूँ की उपज कम हो सकती है पूर्वी तटीय क्षेत्र में चक्रवात व तूफान के साथ बाढ़ आने की संभावना बनी रह सकती है। विश्व संसाधन संस्थान रिपोर्ट अनुसार भारत ग्रीन हाऊस गैसों का उत्सर्जन करने वाला पांचवा सबसे बड़ा देश है।

वन विनास, भूमि क्षरण, पारिस्थतिक परिवर्तन,जैव विविद्यता खतरा इससे वन्य जीव का एक स्थान से दुसरे स्थान पर पलायन करना इनमें बाघ, चितल, हिरण, नीलगाय, रोजड़ आदि प्रमुख है।

प्राकृतिक पर्यावरण के सामान्तर निर्मित मानवीय पर्यावरण इगिंत करने लगा कि प्रकृति पर विजय पायी जा सकती है। इसी मानसिकता के कारण मानव प्रकृति सम्बन्ध में दुराव आने लगा। प्रकृति के प्रति बढ़ती उदाशीनता के कारण कृषि विकास में किये जा रहे है नित्य नये तकनीकी, रासायनिक उर्वरकों, उत्तम बीज, ऊर्जा उपयोग आदि कार्यों को करते समय यह भूला दिया गया कि प्रकृति के नियमों का उल्लंघन दुःख दायी हो सकता। कृषि में तकनीकीरण ने जो मानसिकता प्रधान की उससे कृषि विकास और पशुपालन के स्वरूप में भी परिवर्तन आया है। कृषि में कृषि के कारण प्राकृतिक पर्यावरण पर प्रहार बढ़ता गया । अधिक उत्पादन के लिए भूमि का इतना उपयोग किया जाने लेगा कि उसकी उत्पादकता घटने लेगी लेकिन आधुनिकता के आवेश में उसे आयाम देने के लिए बाध्य किया गया। मानव के तकनीकी विकास का अहंकार प्राकृतिक पर्यावरणीय समस्याओं के रूप में प्रकट होने लगा है, जो उसके अस्तित्व के लिए खतरा बनता जा रहा है। विगत सौ वर्षों की तिव्रता आर्थिक, सामाजिक प्रगति ने प्रदुषण प्राकृतिक प्रकोप और विविध सांस्कृतिक समस्याओं को खड़ा कर दिया। अब सवाल यह उठ रहा है कि क्या हम इक्कीसवीं सदी को झेल पायेगें ? '' विश्व बैंक के 2000 की रिपार्ट में कहा गया है कि 20वीं सदी प्रगति के उत्तरोत्तर वृद्धि की सदी रही है तो इक्कीसवीं सदी नीचे खिसकने की सदी प्रमाणित होगी।''

कृषि विकास के स्तर से होने वाले पर्यावरणीय दशाओं पर प्रभाव को दूर के उपाय

प्राकृतिक तथा मानव कृत पर्यावरण कृषि विकास का अभिन्न अंग है। अगर हमें कृषि विकास के स्तर को बढ़ाना है तो पर्यावरणीय दशाओं में कुछ बदलाव तो जरूरी है पर वे बदलाव विध्वंसात्मक न होकर रूचिकर कलात्मक हो तथा हमें लालच से बचाये। कृषि विकास के स्तर की जरूरते तथा मांगों की

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 13 Issue 12, December- 2023
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 8.018
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

पूर्ति पर्यावरणीय संरक्षण को ध्यान में रखतें हुए करना होगा। पर्यावरणीय दशाओं के साख की दृष्टि ही कृषि विकास तथा प्रकृति में तालमेल विठा सकती है कृषि विकास के स्तर के सकारात्मक व नकारात्मक, परिणामात्मक व गुणात्मक विश्लेषण कर उनके संरक्षण के उपयोग की योजना बनाई जाये।

कृषि विकास के स्तर से पर्यावरणीय दशाओं पर होने वाले दुष्प्रभावों से कृषक व आमजन को अवगत करानें के लिए भारत सरकार, राज्य सरकारों एवं जिला सरकारों को जिला स्तर पर तहसील एवं ग्राम स्तर पर इन प्रभावों से अवगत कराया जायें । इन के दुष्प्रभाव वे उपयोग को समझाया जाये।

उपरोक्त कठनाई का उचित समाधान यहीं है कि धीरे–धीरे नई नीति को विस्तृत क्षेत्रों में लागू किया जाये खेतीहर, मजदूरों, छोटे कृषकों व ग्रामीण काश्तकारों के लाभ के लिए विशेष कार्यक्रम संचालित किये जाय, ग्राम्य औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया को तजे करके ग्रामवासियों के लिए रोजगार के साधनों की व्यवस्था बढ़ाई जाये। सरकार के द्वारा देश में छोटे कृषकों के लिए कृषि विकास ऐजेन्सयों की स्थापना की जाये । जिसे किसानों को पर्यावरणीय दशाओं के कुप्रभाव से अवगत कराया जा सके । सार्वजनिक निर्माण कार्यक्रम को अपनाया जाये और कृषि विकास के ढ़ाचे में तथा उद्योगों के विकास में इस प्रकार फेर बदल किये जाये जिसमें पूँजी की तुलना में श्रम का अधिक उपयोग हो सके एवं पर्यावरणीय दशाओं को निम्न स्तर पर प्रभावित करे।

कृषि विकास व पर्यावरणीय दशाओं के मध्य सम्बन्ध शरीर की रक्त वाहिनियों के समान मान सकते हैं इसमें कोई अतिशोक्ति नहीं होगी । जिससे ध्यान में रखते हुए कृषि में कतनीकी विकास किया जाना चाहिए । पर्यावरण को हानि पहुँचाने वाले रासायनिक खाद उर्वरकों के स्थान पर देशी खाद (गोबर खाद) के उपयोग को बढ़ावा दिया जाना चाहिए । खेतों में उर्वरा शक्ति को बनाये रखने के लिए दलहन, गांठ वाली फसलों के उत्पादन व फसलों के चक्र को अपना, आदि को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। कुआँ व नलकूपों से सिंचाई के स्थान पर नहर से सिंचित क्षेत्र को बढ़ावा दिया जाये। परती भूमि पर अधिक से अधिक पेड़–पौधे लगाये जाये। कृषि विकास की अर्थव्यवस्था का आधार ही नहीं है बल्कि हमारे भारत देश की अर्थव्यवस्था की रीड़ की हड्डी के समान है।

मानव व मानव का वातावरण स्वच्छ रहने हेतु हमें अधिकाधिक वृक्षारोपण करना होगा एवं संयुक्त प्रयास करते हुए पर्यावरणीय चेतना लानी होगी। अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर 3 जून 1992 में रीओ–द–जेनेरों में पृथ्वी सम्मेलन सम्पन्न हुआ वह पूर्णतः पर्यावरणीय केन्द्रीत था। शुष्क कृषि पद्धति को अपनाया जाये सिघ्र पकने वाले उत्तम किस्मों के बीजों के प्रयोग पर जोर दिया जाये।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 13 Issue 12, December- 2023
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 8.018
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

भारत में गैर–पारम्परिक ऊर्जा स्त्रोतों का विकास अभी प्रारम्भिक अवस्था में है हालांकि इसकी सम्भावना बहुत अधिक है। भारत गाँवों का देश है। गाँवों को सबसे अधिक लाभ ऐसी ही ऊर्जा से हो सकता है, लेकिन आवश्यकता इनके प्रचार और विकास की है। भोजन पकाने, रोशनी करने और छोटे यन्त्रों के लिए गैर–पारम्परिक ऊर्जा स्त्रोत–गोबर गैस, पवन शक्ति, कचरा विद्युत, सौर ऊर्जा आदि सबसे उत्तम प्रमाणित हो सकता है। इससे एक तरफ गाँवों में जलावन लकड़ी की समस्या का समाधन होगा, वहीं गोबर का उपयोग खेतों में खाद के लिए किया जा सकेगा। जहाँ जंगल साफ कर दिये हैं, वहाँ जलावन की समस्या विकट हो गई है। यह भी विचारणीय है कि घरेलु कार्यों में प्रयोग की जाने वाली ऊर्जा के प्रयोग की तकनीकी को सुधार कर खपत को होने वाली हानियों से बचाया जा सकता है। इस दिशा में धुआं रहित चुल्हे के प्रसार–प्रचार, कृषि हानिकारक कीटनाशकों, हानिकारक कृषि तरिकों के स्थान पर नवीन तकनीकी को अपनाने पर जोर दिया जाना चाहिए। पशुओं की संख्या को बढ़ाया जाकर घरेलु जलावन ईधन की मांग को व खेतों में कृत्रिम खाद के स्थान पर गोबर की खाद के उपयोग को बढ़ाया जाकर कृषि विकास के स्तर विकसित किया जा सकता है। इससे पर्यावरणीय दशाओं की समस्या भी हल हो सकती है। पर्यावरणीय दशाओं के सुधार के लिए वैकल्पिक स्त्रोतों का त्वरित विकास आज की सामयिक आवश्यकता है।

निष्कर्षतः कृषि तकनीकि विकास व पर्यावरणीय सम्बंध में सन्तुलन बनाये हुए है। सिंचाई के साधनों के कारण अव भूमि उनउर्वक होने से बचाया जा सकता है। उन उपजाऊ भूमि को कृषि योग्य बनाया जा सकता है। तकनीकीकरण द्वारा तिव्र गति से खेतों की मेंङबन्दी, उत्तम किस्म के पेड़–पौधे लगाकर भूमि कटाव के अपर्याप्त अपरदन को रोका जा सकता है। कृषि व पर्यावरण में सदियों से अनुकूल सम्बंध बने हुए कभी कृषि तनीकीकरण पर्यावरणीय दशाओं को प्रभावित करता है तो कभी पर्यावरणीय दशाऐं कृषि विकास को प्रभवित करते है।वर्तमान युग में आधुनिक नवीन तकनीकी को अपनाये जाने के फलस्वरूप इसमें वाधित विनियोग की आवश्यकता और अधिक बढ़ गई है। रासायनिक उर्वरकों एवं कीनाशक औषधियों के प्रयोग, यन्त्रीकरण, कृषि–सिंचाई सुविधाओं में अधिकाधिक वृद्धि कृषि में तकनीकी विकास से ही सम्भव है। यह एक निर्विवाद तथ्य है कि कृषि में तकनीकीकरण के अभाव में कृषि विकास की न तो कल्पना की ही जा सकती है और न ही इस सम्बन्ध में प्रतिपादित योजनाओं एवं कार्यक्रमों को मूर्त रूप प्रधान किया जा सकता है। कृषि तकनीकी विकास एवं पर्यावरणीय सम्बन्ध का शरीर की रक्त बाँहनियों के समान माना जा सकता है।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 13 Issue 12, December- 2023
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 8.018
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

संदर्भ :

- राव श्रीवास्तव, (1990) : '' पर्यावरण और पारिस्थितिकीय'', वशुन्धरा प्रकाशन,
- सिंह, काशीनाथ (2003) : ''कृषि भूगोल'', मैट्रोपब्लिशर्स पांडव नगर, दिल्ली ।
- कुमार, पी.एण्ड शर्मा के. (1990) : ''कृषि भूगोल'' मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
- कौशिक, एस.डी. (1986) : ''मानव एवं आर्थिक भूगोल'', रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ।
- शर्मा, बी.एल. (1990) :'' पर्यावरण नियोजन एवं पारस्थितिकीय विकास'', साहित्य भवन,, आगरा।
- गुर्जर, आर.के. (1997) : ''पर्यावरण प्रबन्धन एवं विकास'', पोइन्टर पब्लिकेशन, एस.एम.एस. हाइवे, जयपुर।